Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)*with* International Impact Factor 8.357
Peer Reviewed Journal
https://doi.org/10.69758/GIMRJ/2508S01V13P012

e-ISSN No. 2394-8426
Special Issue on Scientific Research Aug'25
Issue–VIII(I), Volume–XIII

भारत में आरक्षण का इतिहास

डॉ. चंद्रमणी का. भोवते
सहयोगी प्राध्यापक- राज्यशास्त्र
स्व. निर्धन पाटील वाघाये कला महाविद्यालय एकोडी
ता. साकोली, जि. भंडारा
Email :- chandubhowate@gmail.com

प्रस्तावना :-

भारत में आरक्षण का इतिहास बहुत पुराना है। यहाँ आजादी से पहले ही नौकरीयों और शिक्षा में पिछडी जातीयों के लिए आरक्षण देने की शुरुआत हो चुकी थी। इसके लिए विभिन्न राज्यों मे विशेष आरक्षण के लिए समय-समय पर कई आंदोलन हुए है। जिनमें राजस्थन का गुर्जर आंदोलन, हरियाणा का जाट आंदोलन और गुजरात का पाटीदार (पटेल) आंदोलन प्रमुख है। इस लेख में हम भारत में आरक्षण के इतिहास और वर्तमान स्थिती का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत कर रहे हैं।

मुख्य शब्द :-

आरक्षण, संवैधानिक आंदोलन, ऐतिहासिक, प्रतिनिधीत्व.

आरक्षण का अर्थ :-

आरक्षण (Reservation) का अर्थ है अपना जगह सुरक्षित करना। प्रत्येक व्यक्ति की इच्छा हर स्थान पर अपनी जगह सुरक्षित करने या रखने की होती है, चाहे वह रेल के डिब्बे मे यात्रा करने के लिए हो या किसी अस्पताल में अपनी चिकित्सा कराने के लिए, विधानसभा या लोकसभा का चुनाव लडने की बात हो तो या किसी सरकारी विभाग में नौकरी पाने की।

भारत में आरक्षण की शुरुआत एवं इसके विभिन्न चरण :-

- भारत में आरक्षण की शुरुआत 1882 मे हंटर आयोग के गठन के साथ हुई थी। उस समय विख्यात समाज सुधारक महात्मा ज्योतिराव फुले ने सभी के लिए नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा तथा अंग्रेज सरकार की नौकरीयों में अनुपातिक आरक्षण/ प्रतिनिधीत्व की मांग की थी।
- 1891 के आरंभ में त्रावणकोर के सामंती रियासत मे सार्वजनिक सेवा में योग्य मूल निवासीयों की अनदेखी करके विदेशियों को भर्ती करने के खिलाफ प्रदर्शन के साथ सरकारी नौकरियों में आरक्षण के लिए मांग की गयी।
- 1901 में महाराष्ट्र के सामंती रियासत कोल्हापुर में शाहू महाराज द्वारा आरक्षण की शुरुवात की गई। यह अधिसूचना भारत में दलित वर्गो के कल्याण के लिए आरक्षण उपलब्ध कराने वाला सरकारी आदेश है।
- 1908 में अंग्रेजों द्वारा बहुत सारी जातियाँ और समुदायों के पक्ष में, प्रशासन में जिनका थोडा बहुत हिस्सा था, के लिए आरक्षण शुरु किया गया।
- 1909 और 1919 में भारत सरकार अधिनियम में आरक्षण का प्रावधान किया गया।
- 1921 में मद्रास प्रेसीडेंसी ने जातिगत सरकारी आज्ञापत्र जारी किया, जिसमें गैर-ब्राम्हणों के लिए 44 प्रतिशत, ब्राम्हणों के लिए 16 प्रतिशत, मुसलमानों के लिए 16 प्रतिशत, भारतीय-एंग्लो/ईसाईयों के लिए 16 प्रतिशत और अनुसूचित जातियों के लिए 8 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था की गई थी।
- 1935 में भारतीय राष्ट्रीय कॉग्रेस ने प्रस्ताव पास किया, (जो पूना समझौता कहलाता है) जिसमें दलित वर्ग के लिए अलग निर्वाचन क्षेत्र की मांग की गई थी।
- 1935 के भारत सरकार अधिनियम में आरक्षण का प्रावधान किया गया था।

- 1942 में बी. आर. अम्बेडकर ने अनुसूचित जातीयों की उन्नती के समर्थन के लिए अखिल भारतीय दलित वर्ग महासंघ की स्थापना की। उन्होने सरकारी सेवाओं और शिक्षा के क्षेत्र में अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षण की मांग की।

आरक्षण की ऐतिहासीक पृष्ठभूमी :-

भारतवर्ष में शासकीय नौकरियों में आरक्षण की ब्रिटीश सत्ता समाप्ति के अंतिम चरण में पूरी तरह से स्थापित हो चुकी थी। लेकिन यह नीति शासकीय सेवाओं में सांप्रदायिक असमानता दूर करके प्रतिनिधीत्व प्रदान किये जाने तक ही सीमित थी। इन नीति का उद्देश सदियों से उपेक्षित सामाजिक, असमानता से पीडीत समुदाय को सामाजिक, आर्थिक समानता प्रदान करके कल्याणकारी व समतामय समाज की स्थापना बिल्कुल नही था। उच्च वर्णीय हिन्दुओं का शासकीय सेवाओं मे प्राप्त वर्चस्व को सर्वप्रथम केन्द्र की जनसंख्या को चुनौती मुस्लिम, ईसाई, सिक्ख एवं आंग्ल भारतीय द्वारा दी गई। उन्होने मांग की कि अनुपात में अभिजात हिन्दुओं का प्रतिनिधित्व सरकारी सेवाओं में अत्याधिक है, जबकि मुस्लिम, ईसाई, सिक्ख एवं आंग्ल भारतीयों का उनकी जनसंख्या के अनुपात में नगण्य है। लेकिन दक्षिण भारत में गैर ब्राम्हण समुदाय जातियों द्वारा शासकीय नौकरियों मे ब्राम्हण समुदाय का शासकीय नौकरियों में पूर्ण वर्चस्व के प्रति विद्रोह कर दिया गया और आबादी के अनुपात के अनुसार प्रतिनिधित्व की मांग प्रारंभ कर दी।

दक्षिण भारत में आरक्षण की नीति का समुदाय :-

ब्रिटीश शासित प्रदेश मद्रास एवं देशी रियासत मैसूर में सन 1874 में ब्राम्हण जाति की तुलना में गैर ब्राम्हण जातियों का शासकीय नौकरियों मे नगण्य प्रतिनिधित्व को ध्यान में रखते हुए, उनके लिए आरक्षण नीति प्रारंभ की गई। सन 1895 में मैसूर देशी रियासत में पुलिस विभाग कें ब्राम्हण, मुसलमान एवं अन्य हिन्दू जातियों को जनसंख्या के अनुपात में सरकारी सेवाओं में स्थान आरक्षित किए गए। सन 1874 में सांप्रदायिक आरक्षण नीति के बावजूद जब भी स्थिती नही सुधर सकी ब्राम्हणों का वर्चस्व अभी भी कायम था। इस कारण मैसूर सरकार नें 1895 में पिछडे वर्गो के लिए परिपत्र जारी करते हुए सरकारी नौकरियों में आरक्षण की व्यवस्था की। सन 1918 मे आरक्षण नीति का पुन: परीक्षण शुरु किया गया, फिर भी ब्राम्हणों का वर्चस्व नौकरियों में कायम रहा। इसलिए मैसूर महाराज ने राज्य सेवाओं मे गैर ब्राम्हणों को पर्याप्त प्रतिनिधित्व देने के लिए उपाय सुझाने हेतु मैसूर के तत्कालीन उच्च न्यायाधीश सर एल. सी. मिलर की अध्यक्षता में एक समिती नियुक्त की। मिलर समितीने पिछडा वर्ग की परिभाषा, जाति एवं वर्ग के आधार पर किया, तथा उसमें मुसलमानों को भी शामिल किया, जिनका प्रतिनिधित्व सरकारी सेवाओं मे नही था।

सन 1928 में बंबई सरकार ने पिछडे वर्गों का पता लगाने के लिए उनके लिए विशेष प्रावधानों की सिफारीश करने के लिए नि. ओ. एच. वी. स्टोर की अध्यक्षता में एक समिती गठित किया था। उसमे 1930 में रिपोर्ट पेश करके "दलित वर्ग" "आदिवासी तथा पर्वतीय जनजाती" एवं "अन्य पिछडे वर्ग" में वर्गीकृत किया। इस समिती ने तीन वर्गों को शासकीय सेवाओं मे आरक्षण देने की सिफारिश थी। उत्तर भारत में पिछडे वर्गों का कोई भी संगठन न होने से आरक्षण के संबंध में कोई मांग नही की गई इस कारण उत्तर भारत की देशी रियासतों व ब्रिटीश सरकार ने पिछडे वर्ग के लिए कोई भी व्यवस्था नही की है।

अखिल भारतीय स्तर पर दलित वर्ग के कल्याण के लिए पृथक व्यवस्था का प्रयास 1919 के मान्टेग्यू चेम्स फोर्ड रीफार्म्स द्वारा किया गया और इन वर्गों को अनेक सरकारी निकायों में प्रथम बार प्रतिनिधीत्व प्रदान किया गया।

भारतीय संवैधानिक प्रतिकारात्मक भेदभाव (Compansatory descrimination) नीति का निर्धारण डॉ. अम्बेडकर द्वारा अछूतों का आर्थिक व सामाजिक उन्नति के लिए, अनवरत मांग का परिणाम है। इस नीति की आधारशिला भारत वर्ष में गांधी जी के पूना पैक्ट के उपरान्त रखी गई। डॉ. अम्बेडकर ने जाति व्यवस्था पर चोट करते हुए उसे समूल नष्ट करने की मांग की। महात्मा गांधी ने अस्पृश्यता निवारण पर जोर दिया।

भारतीय अधिनियम 1935 के अन्तर्गत अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जन जातियों को दिया गया मुख्य लाभ संघीय विधानसभा पालिकाओं तथा प्रांतिक विधानसभाओं में राजनितिक प्रतिनिधित्व प्रदान करता था।

सरकारी सेवाओं मे दलित वर्गों को उचित प्रतिनिधित्व प्रदान करने के लिए भारत सरकार ने 1934 में अनुदेश जारी किये कि इन वर्गों के योग्य उम्मीदवार केवल नियुक्ति के समुचित अवसर से इसलिए वंचित न किए जाएं कि वे खुली प्रतियोगिता में सफल नही हो सकते, लेकिन उनके लिए कोई प्रतिशत निर्धारित नही किया गया। 1943 में अनुसूचित जातियों के लिए रिक्तियों का 81/3 प्रतिशत आरक्षण करने का आदेश दिया गया। जून 1946 में यह आरक्षण 121/2 प्रतिशत बढा दिया गया। परंतु पिछडी जन जातियों के लिए कोई आरक्षण नही किया गया, क्योंकी उनका शिक्षा का स्तर नगण्य था।

भारतीय अधिनियम 1935 के अन्तर्गत "दलित वर्ग" के स्थान पर अनुसूचित जाति नाम दिया गया। इसके साथ ही "आदिम जनजाति" के स्थान पर "पिछडी जनजाति" नाम दिया गया। स्वतंत्रता के पश्चात भारतीय संविधान में पिछडी जनजाति के लिए अनुसूचित जनजाति शब्द का प्रयोग किया गया। सन 1947 तक भारतीय अधिनियम 1935 में की गई परिभाषा ही लागू थी। भारतीय गणतन्त्र के संविधान मे भी जाति, वंश एवं मूल के आधार पर अनुसूचित जातियों व अनु. जनजातियों को परिभाषित किया गया है।

संविधान सभा बहस :-

केबिनेट मिशन योजना द्वारा अल्पसंख्यकों को समुचित प्रतिनिधित्व देने के संबंध में सुझावों को ध्यान में रखते हुए संविधान सभा ने मूल अधिकार एवं अल्पसंख्यांक विषय पर सुझाव देने हेतु एक अल्पसंख्यांक सलाहकार समिती का गठन सरदार वल्लभ भाई की अध्यक्षता में की गई। इस समिती में हिन्दू, मुसलमान, अनु. जाति, सिक्ख, भारतीय, ईसाई, एवं आदिवासी इत्यादि सभी के प्रतिनिधी थे। सिक्ख एवं आंग्ल भारतीयों ने अपने वर्गों के लिए विशेष आरक्षण की मांग शासकीय नौकरियों में की थी। दलित वर्गों के प्रमुख प्रवक्ता डॉ. अम्बेडकर ने अनुसूचित जातियों की सामाजिक व आर्थिक हालात सुधारने, इन वर्गों को शिक्षा शासकीय नौकरियों इत्यादि में विशेष आरक्षण देने की वकालत जोरदार एवं प्रभावशाली ढंग से किया। उन्होंने दलित वर्गों कों राजनितीक आरक्षण देने की मांग की। उन्होने अनुसूचित जातियों को धार्मिक अल्पसंख्यांक निरुपित किया।

मुसलमानों द्वारा संघ एवं राज्य की विधानसभाओं में आरक्षण देने व नौकरियों में आरक्षण देने की मांग नही की गई क्योंकि मुस्लिम लीग में संविधान सभा के बहुत से सदस्यों ने भाग नही लिया। काँग्रेस भारी बहुमत से विधानसभा में विजयी रही थी। इसलिए वह जो चाहते अपने अनुकूल पास कर सकते थे। सलाहकार समिती के अध्यक्ष सरदार पटेल ने अल्प संख्यकों को किसी भी प्रकार आरक्षण देने की मांग का विरोध किया। फिर भी सुझाव दिया था कि संविधान या अनुच्छेद में केन्द्र राज्य सरकारों को इस बात का निर्देश होना चाहिए कि वह देखे कि अल्पसंख्यांको को शासकीय नौकरियों में पर्याप्त प्रतिनिधित्व मिलता रहा है या नही। समिती सामाजिक व शैक्षणिक रुप सें पिछडे वर्गो के हितों की जांच करने, वह किस स्थिती में कार्य करते हैं तथा उनके उत्थान के लिए क्या कदम उठाना चाहिए, इसकी जाँच के लिए एक कानूनी आयोग के गठन की व्यवस्था होना चाहिए का सुझाव दिया था।

समिती की प्रमुख मांगे संविधान सभा द्वारा मान ली गई। मुस्लीम लीग का रुख सहयोगात्मक नही था, वह अभी भी पृथक निर्वाचन क्षेत्र की मांग कर रहा। 1947 में भारत का विभाजन हो गया। कुछ अल्पसंख्यांक समुदायों ने मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई, ईत्यादि के लिए विधायिका एवं शासकीय नौकरियों में आरक्षण देने की व्यवस्था को वापस ले लिया केवल अनु. जाति, अनु. जनजाति एवं अन्य पिछडे वर्गों के लिए विधायिका एवं शासकीय नौकरियों में आरक्षण की व्यवस्था को यथास्थान कायम रखा गया तथा अन्य पिछडे वर्गों के लिए केवल शासकीय नौकरियों में आरक्षण व्यवस्था को कायम रखा।

अन्त में संविधान सभा की चर्चा के उपरान्त जो प्रमुख बात उभर कर सामने आई वह थी, अनु. जाति, अनु. जनजाति को विधायिका एवं शासकीय नौकरियों में आरक्षण प्रदान करने तथा पिछडें वर्गों को शासकीय नौकरियों में आरक्षण

करने की व्यवस्था। इसके लिए डॉ. अम्बेडकर ने संविधान सभा में सशक्त पैरवी की थी। संविधान सभा विचार विमर्श का विश्लेषण जिसके फलस्वरुप अनुच्छेद 16(4), 46 और 340 शामिल किए गए।

सारांश :-

सारांश यह है कि एक प्रकार के मूल अधिकारों के आर्थिक दृष्टि से सबल पक्षकारों द्वारा किये जा सकने वाले खुले दुरुपयोगों या अधिक्य को रोकने या अवरुध्द करने के लिए दुर्बल पक्षकारों के दुसरे प्रकार के मूल अधिकारों को मान्यता देना आवश्यक हुआ। दूसरे शब्दों में संविधान के भाग में अभिलिखीत राज्य की नीति के निर्देशक तत्व को संतुलित करने तथा उनके अनुचित या अत्याधिक प्रयोग को रोकने के लिए उन पर निर्बन्धन लगाने के उद्देश्य से हुआ है। राज्य की नीति के निर्देशक तत्व लोकहित की दृष्टि से भाग 3 के मूल अधिकारों पर लगाये गये निर्बंन्ध या उनकी सीमा रेखाएँ है।

सामाजिक व शैक्षणिक दृष्टि से पिछडे वर्ग एवं समुहों की शिक्षा के क्षेत्र में विशेष सुविधाएं व शिक्षण संस्थाओं में प्रवेश हेतु आरक्षण तथा शासकीय नौकरियों में आरक्षण की व्यवस्था उनका संविधानिक मूल अधिकार है। जाँच व अन्य प्रकार से साबित हो जाने पर की कोई जाति, वर्ग व समूह सामाजिक व शैक्षणिक रुप से पिछडा है तथा शिक्षण संस्थाओं में व शासकीय सेवाओं में उनका पर्याप्त प्रतिनिधित्व नही है तो उसको अनुच्छेद 15(4) एवं 16(4) के अनुसार आरक्षण की पात्रता उत्पन्न हो जाती है।

संदर्भ ग्रंथ :-

1) शौरी अरुण (2018) आरक्षण का दंश, नई दिल्ली, प्रभात प्रकाशन.
2) प्रभाकर डि. भे. (2020) सामाजिक न्याय का प्रथम सोपान आरक्षण, दिल्ली प्रेस.
3) सत्येन्द्र पी. एन. (2018) मंडल कमिशन राष्ट्र निर्माण की सबसे बडी पहल, दिल्ली लेक्ट वर्ड प्रकाशन
4) फलवारिया, राजकुमार और विश्वकर्मा ईश्वर शरण, (2017) राष्ट्रीय आरक्षण निती, नई दिल्ली, प्रभात प्रकाशन.